International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED), ISSN: 2320-8708
Vol. 2 Issue 6, Nov.-Dec., 2014, pp: (95-99), Impact Factor: 1.267, Available online at: www.erpublications.com

चहमान वंश व गहड़वाल वंश के मध्य संबंधों में गिरावट के कारण एवं परिणाम

हरि निवास

परिचय

चौहान या **चव्हाण / चहमान** उत्तर भारत की आर्य जाति का एक वंश है। चौहान गोत्र राजपूतों में आता है। विद्वानो का कहना है कि। चौहान साम्भर झील और पुष्कर आमेर और वर्तमान जयपुर राजस्थान में होते थे जो अब सारे उत्तर भारत में फैले हुए हैं। इसके अलावा मैनपुरी उत्तर प्रदेश एवं नीमराना राजस्थान के अलवर जिले में भी पाये जाते हैं।

गहड़वाल वंश

गढ़वाल भारत में राजस्थान और उत्तर प्रदेश में पायी जाने वाली एक जाट वंशावली है। राजस्थान में मुख्यतः सीकर जिले के विभिन्न गावों में ये लोग बसे हुए हैं यह संभव है कि ये लोग गढ़वाल क्षेत्र से आकर बसे हों और उस क्षेत्र के नाम के आधार पर अपने गोत्र को नाम दिया हो। गढ़वाल हिमालय में स्थित भारत के उत्तराखंड राज्य का एक क्षेत्र और प्रशासनिक प्रभाग है। यह माना जाता है कि इन लोगों के स्वयं के 52 स्वतंत्र किले (गढ़) और 52 किलाप्रमुख थे इसलिए इन्हें गढ़वाल नाम दिया गया था। लगभग 500 साल पहले, इन प्रमुखों में से एक, अजय पाल, ने अपने प्रभुत्व के तहत सभी छोटी रियासतों को मिलाकर गढ़वाल राज्य की स्थापना की थी।

शिहाबुद्दीन गोरी का आक्रमण (1193–1194) और गाहडवाल राज्य का पतन

12वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में उत्तर भारत के चार सर्वाधिक प्रमुख राज्य– गाहडवाल, चाहमान, सोलकीं और चन्देल– जब आपस में ही लड़ रहे थे, गियासुद्दीन मुहम्मद और मुइजुद्दीन (शिवाबुद्दीन) मुहम्मद गोरी के नेतृत्व में गोर के पहाड़ों में पारसीक मुसलमानों की एक शाखा मुसलमान साम्राज्य के इतिहास में एक नये अध्याय का सूत्रपात कर रही थी। उसकी महत्त्वाकांक्षाएँ गोर जैसे एक छोटे से क्षेत्र में सीमित रहने से सन्तुष्ट होने वाली नहीं थीं और गजनी साम्राज्य का अपने को वास्तविक उत्तराधिकारी समझते हुए उन्होंने भारत के लहलहाते मैदानों की ओर दृष्टि फेरी। क्रमशः उन्होंने गजनी (1173 ई0), मुल्तान (1175 ई0), पेशावर (1179 ई0) और लाहौर (1187 ई0) पर अधिकार कर लिया।[1]

1178 ई0 में उन्होंने चौलुक्यों के राज्य पर भी चढ़ाई की, किन्तु वहाँ के नवजवान और वीर राजा भीमदेव ने काशह्रद के मैदान में उन्हें करारी मात दी। उस समय उसकी न तो चाहमान राजा पृथ्वीराज ने सहायता की और न जयच्चन्द्र ने ही। यह इस बात का द्योतक है कि अकेले–अकेले भी बड़ी–बड़ी वीरताओं के प्रदर्शन में समर्थ उन राजाओं ने यह कभी नहीं सोचा कि सबके लिए समान शत्रु (मुहम्मदगोरी) के सामने उनका एक हो

जाना ही उनके सामने अकेला विकल्प रह गया था। वे अपने युग की कमजोरी से ऊपर नहीं उठ सके और परस्पर लड़कर एक दूसरे को शक्तिहीन करते रहे। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि उन्हें गोरी आक्रमणों के दूरगामी परिणामों की किंचित्मात्र भी कल्पना थी। ताजुल–मसीर के अनुसार 'अपनी बड़ी सेना और महान् वैभव के कारण पृथ्वीराज के मन में विश्व–विजय करने जैसी भावना का मानों कोई भूत घर कर गया था।' किन्तु असली अवसर आने पर जब उसने आक्रामकों के सामने कमर कसी तो अकेला ही रह गया। जयच्चन्द्र तथा भीम तमाशा देखते रहे। तराइन की दूसरी लड़ाई (1192 ई0) में जब वह पराजित होकर मारा गया तो जयच्चन्द्र ने दीवाली तो मनायी, किन्तु उसके दीपों की लवें स्वयं उस पर शीघ्र ही मोहम्मद गोरी के आक्रमण की आँधी में बुझ गयीं।

जयच्चन्द्र को कदाचित् अपनी 'बालू के कणों की तरह अनगिनत' जान पड़ने वाली 'लगभग 10 लाख पदातियों और 700 हाथियों' की सेना पर अत्यधिक विश्वास था। भारतीय साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि उसने चन्दावर के युद्ध के पूर्व सहाबदिन (शिहाबुद्दीन) की सेनाओं को कई बार हराया था। तराइन की सफलता के बार मुहम्मद गोरी के सेनानायक मेरठ, दिल्ली (1193 ई0) और उसके आगे तक धावे मारकर अपना अधिकार–क्षेत्र बढ़ाने लगे, और यह असम्भव नहीं है कि गाहडवाल सेनाओं से संघर्ष के प्रारम्भिक चक्रों में वे पराजित हुए हों।

मुहम्मद गोरी से युद्ध और चाहमान सत्ता का पतन

चाहमानों का सारा इतिहास तुर्कों से संघर्ष का इतिहास है। चतुर्थ विग्रहराज को अभिलेखों में 'आर्यवर्त्त की तुर्क म्लेच्छों से रक्षाकर उसे सचमुच आर्यभूमि बनाने' का श्रेय दिया गया है और जयानकभट्ट 'गोमांसभक्षी म्लेच्छ के रूप में कलियुग की प्रत्यक्ष मूर्ति' मुहम्मद शिहाबुद्दीन गोरी का अन्त करना तृतीय पृथ्वीराज के जीवन का लक्ष्य बताता है। किन्तु तत्कालीन भारतीय समाज और संस्कृति की रक्षा का बीड़ा उठाने वाले उस चाहमान शासक में जितनी वीरता, उत्साह और अपनी आन पर मर मिटने की सतत् तत्परता थी, उतनी राजनीतिक बुद्धिमानी नहीं थी।

यद्यपि उस समय के प्रमुख भारतीय राजाओं में वह इस दोष का अकेला दोषी नहीं था, सीमान्तों पर स्थित होने के कारण कदाचित् वह सर्वाधिक उत्तरदायी माना जायगा। 1173 ई0 में शिहाबुद्दीन गोरी ने गजनी पर अधिकार कर लिया और उसके दो वर्षों के भीतर ही भारत पर भी अपनी गृद्ध दृष्टि डालने लगा। मुल्तान औन उच्छ पर अधिकृत हो जाने (1175 ई0) के बाद उसका सबसे पहला मुख्य आक्रमण 1175 ई0 में गुजरात पर हुआ । मार्ग में उसने किरादू युद्ध के पूर्व चौलुक्यों ने कदाचित् चाहमानों से सहायता मांगी थी, किन्तु अपने मंत्री कदम्बवास का परामर्श विपरीत होने के कारण पृथ्वीराज ने न तो नाडोल के चाहमानों की कोई सहायता की और न चौलुक्यों की ही।

यह उदाहरण उस समय के मंत्रियों में दूरदृष्टि के अभाव का परिचायक है। किन्तु राजा होने के नाते पृथ्वीराज का उत्तरदायित्त्व इस सम्बन्ध में और भी अधिक था। कदाचित् उसकी नववयस्कता और राजनीतिक अपरिपक्वता इस अल्पदृष्टि का एक कारण थी। इसका सबसे प्रमुख कारण चाहमानों से चौलुक्यों की पारस्परिक शत्रुता रही होगी, जो पीछे उनमें होने वाले कई संघर्षों का मूल थी। आपस में ही लड़ते रहने वाले उस समय के भारतीय राजाओं की सम्भवतः यही धारणा थी कि शत्रु की पराजय चाहे जिससे अथवा जैसे भी हो, अच्छा ही है।

इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि वे मुहम्मद गोरी की भारत पर साम्राज्य स्थापित करने की योजनाओं से परिचित थे। काशह्रद की लड़ाई में हारकर भी गोरी अपने उद्देश्यों से विरत नहीं हुआ और धीरे–धीरे मुल्तान (1175 ई0) तथा सारे सिन्ध और पंजाब (1186 ई0) पर अधिकृत होने की योजनाएँ सफलता पूर्वक कार्यांवित करता रहा। किन्तु उस समय उसकी सीमाओं पर स्थित सबसे नजदीकी शत्रु पृथ्वीराज चन्देलों, गाहडवालों और चौलुक्यों से ऐसे अनावश्यक युद्ध लड़ता रहा, जिनसे न तो उसकी राज्य–सीमाओं में कोई वृद्धि हुई और न अन्य कोई आर्थिक अथवा सैनिक लाभ ही हुआ।

International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED), ISSN: 2320-8708
Vol. 2 Issue 6, Nov.-Dec., 2014, pp: (95-99), Impact Factor: 1.267, Available online at: www.erpublications.com

तराइन का युद्ध

तराइन का युद्ध अथवा **तरावड़ी का युद्ध** 1191 और 1192 युद्धों की एक ऐसी शृंखला है जिसने पूरे उत्तर भारत को मुस्लिम नियंत्रण के लिए खोल दिया। ये युद्धमोहम्मद ग़ौरी मूल नाम मुईज़ुद्दीन मुहम्मद बिन साम) और अजमेर तथा दिल्ली के चौहान (चहमान) राजपूत शासक पृथ्वी राज तृतीय के बीच हुये। युद्ध क्षेत्रभारत के वर्तमान राज्य हरियाणा के करनाल जिले में करनाल और थानेश्वर कुरुक्षेत्र के बीच था जो दिल्ली से 113 किमी उत्तर में स्थित है।

मुहम्मद गोरी ने 1186 में गजनावी वंश के अंतिम शासक से लाहौर की गद्दी छिन ली और वह भारत के हिन्दू क्षेत्रों में प्रवेश की तैयारी करने लगे। 1191 में उन्हें पृथ्वी राज तृतीय के नेतृत्व में राजपूतों की मिलीजुली सेना ने जिसे कन्नौज और बनारस वर्तमान में वाराणसी के राजा जयचंद का भी समर्थन प्राप्त था। अपने साम्राज्य के विस्तार और सुव्यवस्था पर पृथ्वीराज चौहान की पैनी दृष्टि हमेशा जमी रहती थी। अब उनकी इच्छा पंजाब तक विस्तार करने की थी। किन्तु उस समय पंजाब पर मोहम्मद ग़ौरी का राज था। 1190 ई० तक सम्पूर्ण पंजाब पर मुहम्मद गौरी का अधिकार हो चुका था। अब वह भटिंडा से अपना राजकाज चलता था। पृथ्वीराज यह बात भली भांति जानता था कि मोहम्मद ग़ौरी से युद्ध किये बिना पंजाब में चौहान साम्राज्य स्थापित करना असंभव था। यही विचार कर उसने गौरी से निपटने का निर्णय लिया। अपने इस निर्णय को मूर्त रूप देने के लिए पृथ्वीराज एक विशाल सेना लेकर पंजाब की और रवाना हो गया। तीव्र कार्यवाही करते हुए उसने हांसी, सरस्वती और सरहिंद के किलों पर अपना अधिकार कर लिया। इसी बीच उसे सूचना मिली कि अनहीलवाडा में विद्रोहियों ने उनके विरुद्ध विद्रोह कर दिया है। पंजाब से वह अनहीलवाडा की और चल पड़े। उनके पीठ पीछे गौरी ने आक्रमण करके सरहिंद के किले को पुन: अपने कब्जे में ले लिया। पृथ्वीराज ने शीघ्र ही अनहीलवाडा के विद्रोह को कुचल दिया। अब उसने गौरी से निर्णायक युद्ध करने का निर्णय लिया। उसने अपनी सेना को नए ढ़ग से सुसज्जित किया और युद्ध के लिए चल दिया। रावी नदी के तट पर पृथ्वीराज के सेनापति समर सिंह और गौरी की सेना में भयंकर युद्ध हुआ परन्तु कुछ परिणाम नहीं निकला। यह देख कर पृथ्वीराज गौरी को सबक सिखाने के लिए आगे बढ़ा। थानेश्वर से १४ मील दूर और सरहिंद के किले के पास तराइन नामक स्थान पर यह युद्ध लड़ा गया। तराइन के इस पहले युद्ध में राजपूतो ने गौरी की सेना के छक्के छुड़ा दिए। गौरी के सैनिक प्राण बचा कर भागने लगे। जो भाग गया उसके प्राण बच गए, किन्तु जो सामने आया उसे गाजर मुली की तरह काट डाला गया। सुल्तान मुहम्मद गौरी युद्ध में बुरी तरह घायल हुआ। अपने ऊँचे तुर्की घोड़े से वह घायल अवस्था में गिरने ही वाला था की युद्ध कर रहे एक उसके सैनिक की दृष्टि उस पर पड़ी। उसने बड़ी फुर्ती के साथ सुल्तान के घोड़े की कमान संभल ली और कूद कर गौरी के घोड़े पर चढ़ गया और घायल गौरी को युद्ध के मैदान से निकाल कर ले गया। नेतृत्वविहीन सुल्तान की सेना में खलबली मच चुकी थी। तुर्क सैनिक राजपूत सेना के सामने भाग खड़े हुए। पृथ्वीराज की सेना ने 80 मील तक इन भागते तुर्कों का पीछा किया। पर तुर्क सेना ने वापस आने की हिम्मत नहीं की। इस विजय से पृथ्वीराज चौहान को 7 करोड़ रुपये की धन सम्पदा प्राप्त हुयी। इस धन सम्पदा को उसने अपने बहादुर सैनिको में बाँट दिया। इस विजय से सम्पूर्ण भारतवर्ष में पृथ्वीराज की धाक जम गयी और उनकी वीरता, धीरता और साहस की कहानी सुनाई जाने लगी।

तराइन का युद्ध

पृथ्वीराज के विरुद्ध सैनिक संघ

जिस तरह त्रिपुरी के चक्रवर्ती कल्चुरी कर्ण की बढ़ती हुई शक्ति उनकी अनेक कठिनाइयों का कारण बनीं थीं, ठीक वही चुनौतियाँ पृथ्वीराज के सम्मुख उपस्थित हो गईं। पृथ्वीराज का उत्तर भारत की प्रमुख सैनिक शक्ति बन जाना उनके विरोधियों के हृदय में शूल की भांति चुभने लगा। जो अनेक राजा उनसे पराजित हो चुके थे, वे भी अवसर की ताक में थे कि कब इनका पराभव हो, क्योंकि पृथ्वीराज की शक्ति का और विस्तार का अर्थ इन राजाओं के राजनैतिक जीवन का अंत था। अतः वे सब पृथ्वीराज के विरूद्ध खड़े हो गये।

कहना न होगा कि जम्मूपति विजयदेव गोरी का सहायक था। पुरातन–प्रबन्ध–संग्रह की सूचना है कि गोरी जम्मूपति के साथ आगे बढ़ता चला आ रहा था। रासो भी यही बात कहता है। नयचन्द सूरि बताते हैं कि घटैक (जम्मू) देश का राजा मुहम्मद गोरी की सफलता के लिए प्राणपण से जुटा हुआ था। यद्यपि नयचन्द सूरि ने जम्मू के राजा का नाम नहीं बताया, उसका नाम विजयदेव था, जिसने अपने पुत्र नरसिंह देव को सेना के साथ नरायन भेजा था। यह सूचना जम्मू की तवारिख राजदर्शिनी देती है।

जेम्स टॉड ने बताया है कि कन्नौज का राजा तथा पाटन (अन्हिलपाटन) के राजा ने पृथ्वीराज का समूल नाश करने के लिए मुहम्मद गोरी को आमंत्रित किया था। जेजाक भुक्ति के चंदेल पूर्व में गजवनियों के सहयोगी रह चुके थे। पृथ्वीराज के साथ इनके कटु सम्बन्ध थे ही। जैसलमेर के शालीवाहन भाटी गोरी की कृपा से ही राजसुख भोग रहे थे। हेमहेल भाटी तो बकायदा गोरी की सेना का एक अंग बना ही हुआ था। तोमरों ने तो आज भी चौहानों को माफ नहीं किया है।

सपादलक्ष के पड़ोसी राजाओं ने धन, जन से गोरी की मदद तो की ही, जब गोरी सेना के साथ सरहिन्द की ओर बढ़ा, तब इन पड़ोसी राजाओं ने सीमा पर सैनिक उत्पात प्रारम्भ कर दिया, ताकि पृथ्वीराज की सैनिक शक्ति बिखर जाए और हुआ भी यही। विरूद्ध विधि–विध्वंस की सूचना है नरायन क दूसरे संग्राम के समय सपादलक्ष का प्रधान सेनापति किसी मोर्चे पर युद्ध कर रहा था। और हम्मीर महाकाव्यम् की सूचना है कि पृथ्वीराज का एक सेनापति उदयराज अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ किसी अन्य मोर्चे पर डटा था।

निष्कर्ष

इस पेपर में लेखक ने चाहमान वंश और गहड़वाल वंश के मध्य सम्बंधो का वर्णन किया है। गहड़वाल वंश की स्थापना गुर्जर-प्रतिहारों के बाद चन्द्रदेव ने कन्नौज में की थी। उसने 1080 से 1100 ई. तक शासन किया। चन्द्रदेव ने महाराजाधिराज की उपाधि भी धारण की। गहड़वाल शासकों को 'काशी नरेश' के रूप में भी जाना जाता था, क्योंकि बनारस इनके राज्य की पूर्वी सीमा के नज़दीक था।

चौहान या चव्हाण उत्तर भारत की आर्य जाति का एक वंश है। चौहान गोत्र राजपूतों में आता है। विद्वानो का कहना है कि। चौहान साम्भर झील और पुष्कर, आमेर और वर्तमान जयपुर, राजस्थान में होते थे, जो अब सारे उत्तर भारत में फैले हुए हैं। इसके अलावा मैनपुरी उत्तर प्रदेश एवं नीमराना, राजस्थान के अलवर जिले में भी पाये जाते हैं।

संदर्भ सूची

[1]. http://hi.wikipedia.org/wiki
[2]. http://hi.bharatdiscovery.org/
[3]. geeteshnegi.blogspot.com
[4]. 166.78.207.100/index.php?topic=211.20;wap2
[5]. kalgati.wikidot.com/rajput